

आज की कविता और मेहनतकश लोग

(भूमंडलीकरण के संदर्भ में)

डॉ. शिव प्रकाश त्रिपाठी
असिस्टेंट प्रोफेसर (हिन्दी विभाग)
बुंदेलखंड कॉलेज, झांसी

वैश्वीकरण एक प्राचीन अवधारणा है जो समय के साथ-साथ अपने स्वरूप में अनेक परिवर्तन करते हुए वर्तमान रूप में हमारे समक्ष दृष्टिगत हो रही है। सिन्धु घाटी सभ्यता में ही हमें विश्व व्यापार के उदाहरण प्राप्त होते हैं। वैश्वीकरण की कोई बंधी-बधाई परिभाषा नहीं है अपितु यह अनेक संयुक्त लक्षणों व गुणों को धारण करने वाली एक संयुक्त संज्ञा का नाम है। वर्तमान समय में यह पूर्ण रूप से बाजारवाद का अभिप्राय बन गयी है। अपने एक भाषण में फ़िदेल कास्त्रो स्पष्ट: कहते हैं कि- **“नव उदार भूमंडलीकरण बिल्कुल साफ़तौर पर तीसरी दुनिया का फिर से उपनिवेशीकरण है मेरा दृढ़तापूर्वक तथा बगैर हिचक के यह कहना है कि विदेशी निवेश के बदले में किसी देश की सम्पदा और प्राकृतिक संसाधनों का निजीकरण करना बहुत बड़ा अपराध है।”**¹ वैश्वीकरण के वर्तमान दौर की शुरुआत भारत में उदारीकरण के पश्चात् मानी जा सकती है। प्रस्तुत लेख में वैश्वीकरण के फलस्वरूप भारत में श्रमिकों की स्थिति में आये परिवर्तन तथा हिंदी की समकालीन कविता द्वारा उनकी पक्षधरता की विवेचना की गयी है।

भारतीय समाज में श्रमिकों की जो विपन्न एवं विदीर्ण स्थिति देख रहे हैं वह कोई एक दिन की देन नहीं है अपितु पहले उत्तरवैदिक कालीन व्यवस्था, फिर लंबे समय तक विदेशियों का शोषण तथा अब देश आजादी के बाद पूंजीवादी हस्तक्षेप, ये सब मुख्य कारण रहे हैं। हमारे यहाँ श्रमिकों को मुख्यतः दो वर्गों में बांटा जा सकता है --

प्रथम- संगठित/औपचारिक क्षेत्र के श्रमिक ,
द्वितीय-असंगठित/अनौपचारिक क्षेत्र के श्रमिक।

संगठित या औपचारिक क्षेत्र से आशय ऐसे व्यावसायिक संस्था से है, जहाँ सदस्यों के कार्यक्षेत्र और स्थिति को निश्चित करके उनके कार्यों, दायित्वों, अधिकारों तथा आपसी संबंधों को स्पष्ट कर दिया जाता है। इसमें उद्योग धंधों तथा गैर औद्योगिक क्षेत्र के नियमित श्रमिक आते हैं। असंगठित क्षेत्र के अथवा अनौपचारिक क्षेत्र वे हैं जिनका निर्माण किसी पूर्व योजना के होता है तथा जहाँ श्रमिकों के वेतन रोजगार की दशाएँ, सुरक्षा, उत्तरदायित्वों आदि का स्पष्ट प्रावधान नहीं होता है। किसी श्रमिक किसी श्रम संगठन से सम्बंधित नहीं होते हैं। इसमें ठेका श्रमिक अनियमित तथा लघु उद्योग के श्रमिक आते हैं कृषि श्रमिक तथा दिहाड़ी मजदूर भी इसी वर्ग में रखे जाते हैं। इनके कार्य करने की दशाये अथवा घंटों का कोई मानक नहीं होता है। मालिक अथवा कार्य करवाने वाली संस्था इनके सुरक्षा का उत्तरदायित्व भी नहीं उठाती।

उदारीकरण के गिनाये जाने वाले तथाकथित लाभ हैं कि तथा इसके परिणाम स्वरूप अनेक विदेशी कम्पनियाँ भारत में आयीं जिससे रोजगार का सृजन हुआ, फैशनेबल श्रम में वृद्धि हुई। श्रमिकों के

आर्थिक व सामाजिक स्तर में सुधार हुआ है। कुशल व प्रशिक्षित श्रमिकों की संख्या में वृद्धि हुई है तथा नए मध्यम वर्ग का विकास हुआ तथा उनमें आत्मनिर्भरता आयी है। श्रम का अन्तर्राष्ट्रीयकरण हुआ तथा तकनीकी उपलब्धि व शोधित बीजों तथा उर्वरकों के प्रयोग से कृषकों के उत्पादकता में वृद्धि हुई। महिलाओं का सशक्तिकरण हुआ तथा राजनीतिक सहभागिता में वृद्धि हुई।

चूँकि साहित्य अपने समाज की शाब्दिक अभिव्यक्ति है और वह समाज के बाह्य और आंतरिक स्वरूप में परिवर्तनों का सूक्ष्म निरीक्षण करता है और किसी भी तरह की घटना अथवा परिवर्तन के पीछे छुपी हुई वास्तविकता को समाज के समक्ष उजागर करता है। समकालीन हिंदी कविता ने उदारीकरण के परिणामस्वरूप गिनाये गए लाभों की सच्चाई को समझा और यह भी स्पष्ट किया कि उदारीकरण के जो लाभ गिनाये जा रहे हैं वो वास्तविक नहीं हैं, सामान्य जनता को दिग्भ्रमित करने वाले चोचले हैं। वैश्वीकरण ने आधुनिक प्रद्योगिकी का प्रचलन कर अकुशल श्रमिकों की संख्या में वृद्धि की है जिस कारण इन श्रमिकों का अनियमित एवं ठेका श्रमिकों के रूप में रूपांतरण हो गया है। कृषि श्रमिकों के जनसंख्या में वृद्धि हुई। कृषि क्षेत्र में विकास दर निम्न रहने के कारण मुद्रास्फीति के सापेक्ष इनकी मजदूरी में कमी आयी जिससे शहरों की ओर पलायन बढ़ा है। शिक्षा के निजीकरण के कारण शिक्षा महँगी हो गयी जिससे निम्न श्रमिक वर्ग के बच्चे तकनीकी शिक्षा से वंचित हो गये और इनका अकुशल श्रमिक के रूप में रूपांतरण हो गया।

हिंदी कविता ने बखूबी इस बात का चित्रण किया है कि किस प्रकार वैश्विक प्रतिस्पर्धा के कारण श्रमिकों के कार्य क्षेत्र में बढ़ोत्तरी हुई तथा श्रमिक वर्ग में तनाव कुंठा में वृद्धि हुई जिससे इनमें मानसिक रोग व आत्महत्या दर में वृद्धि हो गयी। लीलाधर जगूडी जी इस बात को खुद से जोड़ते हुए कहते हैं -

“मेरी कथा

फावड़ा घिस जाने की है

कारखाना उजड़ जाने की

सड़क टूट जाने की है।” 2

भारतीय कृषि श्रमिकों के जीवन को वैश्वीकरण ने अत्यंत व्यापक रूप से प्रभावित किया है। कृषि में यंत्रीकरण के प्रयोग ने उनकी बेरोजगारी दर में वृद्धि कर दी है जिससे उन्हें प्रवास हेतु मजबूर होना पड़ा। हाईब्रिड व शोधित बीजों की मनमानी कीमत वसूल कर किसानों का शोषण किया जा रहा है। कीटनाशकों तथा उर्वरकों के प्रयोग से भूमि का बंजरीकरण हो रहा है तथा उनकी उत्पादकता में कमी आयी है। भारतीय कृषकों के इस दयनीय स्थिति का समकालीन हिंदी कविता ने अत्यंत भावुक किन्तु करुण चित्र खींचा है। मृत्युंजय जी अपने कविता संग्रह ‘स्याह हाशिए’ में ‘दो लाख किसानों के लिए एक कविता’ शीर्षक में कहते हैं -

“धोती की फटी हुई लाँग को समेटे हुए

बूढ़े किसान की आखों में बिला गया सूरज

गुलशने बरार में

दो लाख लाशों की जैविक खाद है तैयार

श्मशान उर्वर हुए।” 3

भारतीय जनजातियों के प्राकृतिक संसाधनों के दोहन के लिए सरकार ने उनका निजीकरण कर दिया जिसके कारण जनजातियों को विस्थापित होना पड़ा जिसके कारण वे कृषि तथा अनियमित

दिहाड़ी मजदूर के रूप में परिणित हो गये। सरकार की इस नीति से भारतीय राष्ट्र - राज्य कमजोर हुआ है तथा नक्सलवाद व पहचान के संकट जैसी समस्या उत्पन्न हुई हैं। हिंदी की समकालीन कविता ने इसका प्रबल विरोध किया तथा जनजातियों के ऊपर किये जा रहे इस अन्याय के खिलाफ आवाज उठाई और जनजातीय अधिकारों के लिए अनवरत संघर्षशील है। हिंदी कविता ने यह भी लक्षित किया है कि जनजातीय सुधार के नाम पर, शिक्षा के नाम पर, विकास के नाम पर किस प्रकार से पूंजीवादी शक्तियों ने जनजातियों और आदिवासियों के प्राकृतिक संसाधनों पर अपना अधिकार जमा लिया। हिंदी कविता न केवल यह स्पष्ट करती है कि शोषण का पूंजीवादी स्वरूप ही विकास के नाम पर आदिवासियों, जनजातियों और स्थानीय निवासियों और उनके संसाधनों का शोषण कर रही है अपितु उसकी और वर्तमान राजनैतिक सत्ता प्रतिष्ठानों के विडम्बनापूर्ण संबंधों की पोल भी खोलती है। वर्तमान हिंदी कविता के सशक्त हस्ताक्षर महेश चन्द्र पुनेठा ने अपनी कविता “शैतान” में लिखते हैं कि

लेकिन शैतान फिर लौट आया है

रूप बदलकर

राजधानी तक लम्बे हैं उसके हाथ

चेहरे से नहीं लगता वह

बिल्कुल भी शैतान सा

आवाज किसी देवदूत सी⁴

वैश्वीकरण के फलस्वरूप भारतीय औद्योगिक श्रमिकों पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़े हैं। वैश्वीकरण के प्रभाव में श्रम कानूनों में ढील दी गयी परिणाम स्वरूप अनौपचारिक क्षेत्र में काम करने वाले श्रमिकों में वृद्धि हुई एवं इनका सीमांतीकरण हुआ वैश्वीकरण के दौर में कंपनियों ने प्रतिस्पर्धा में बने रहने के लिए तथा उत्पाद में गुणवत्ता और सुधार के कारण तीव्र मशीनीकरण और मजदूरों की छंटनी की इससे औद्योगिक श्रमिकों में बेरोजगारी बढ़ी है। उत्पादन लागत में कमी लाने के लिए कंपनियों द्वारा श्रमिकों को दी जा रही कल्याणकारी सुविधाओं में कटौती करना शुरू कर दिया इसप्रकार न सिर्फ असंगठित क्षेत्र अपितु संगठित क्षेत्र के मजदूरों का भी शोषण किया जा रहा है। श्रम के अंतर्राष्ट्रीयकरण की जो बात उठाई जाती है उसकी वास्तविकता को स्पष्ट करते हुए प्रणय कृष्ण जी लिखते हैं “कुछ लोग अभी भी यह कह रहे हैं कि पूँजी का बाजार चूँकि विश्वव्यापी हो गया है इसलिए विश्व मजदूर का भी उदय हो गया है। हकीकत यह है कि बहुराष्ट्रीय पूँजी ने मजदूरों को भरसक अपने ही देश में महदूद रखने के लिए आव्रजन नियम पहले से ज्यादा कड़े कर दिए।”⁵

हिंदी की समकालीन कविता ने इस पूँजीवादी दुष्चक्र के चरित्र को भलीभांति समझा है तथा पूँजीवादी मंसूबों को बेनकाब करने का कार्य करते हुए अपनी पक्षधरता को प्रमाणित किया है। इस बात को लोकधर्मी कवि केशव तिवारी जी बहुत ही प्रभावपूर्ण तरीके से कहते हैं कि

“एक तिलस्म हमने हरपल
महसूस किया
कैसे बाजार के दलदल में फसा आदमी
तब तक नकारता है
जब तक उसमें डूब नहीं जाता है।”⁶

श्रमिक वर्ग में महिला श्रमिकों की एक विशिष्ट स्थिति है, चूँकि महिलाओं की अपनी एक भिन्न सामाजिक आर्थिक व सांस्कृतिक परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है अतः एक श्रमिक के रूप में उनकी भूमिका का विशिष्ट ज्ञान आवश्यक हो जाता है। वैश्वीकरण के फलस्वरूप जहाँ संचार के साधनों का तीव्रता से विकास हुआ और महिलाओं के आत्मनिर्भरता के साथ-साथ सामाजिक व राजनैतिक जीवन की सहभागिता में वृद्धि हुई जिससे घरेलू स्तर पर तनाव व उत्तरदायित्वों को लेकर तनाव हुआ जिससे तलाक दर में वृद्धि हुई। वैश्वीकरण के फलस्वरूप महिलाओं के लिए रोजगार के अवसरों में वृद्धि हुई परन्तु यह वृद्धि मुख्यतः असंगठित क्षेत्रों जैसे सिले हुए वस्त्र, जूता, खिलौना उद्योग सड़क निर्माण भवन निर्माण ईटभट्टा आदि के क्षेत्रों में हुआ जहाँ पर इन्हे न्यूनतम मजदूरी पर इन्हें श्रम करना पड़ता है तथा रोजगार व श्रम सुरक्षा के अभाव के कारण इनका शोषण होता रहता है। तीव्र यंत्रीकरण के कारण अनुसूचित जाति/निम्न वर्ग समूह की अकुशल महिला श्रमिकों की बेरोजगारी दर में वृद्धि हुई जिससे इनका नक्सलीकरण हुआ तथा देह व्यापार में इनकी संलग्नता में वृद्धि हुई। हिंदी की समकालीन कविता ने महिलाओं की इस दयनीय स्थिति का अत्यंत कारुणिक व यथार्थ चित्रण किया है। केशव तिवारी अपने काव्य संग्रह में एक जगह इसे रेखांकित करते हुए कहते हैं –

“खेतों में हाड़ तोड़ मेहनत करके
लकड़ी बेचकर, तेंदू पता तोड़कर
ये खदेड़ना चाह रही है दलिदर
ये जान नहीं पा रही हैं
आखिर दलिदर टरता क्यों नहीं”⁷

वैश्वीकरण ने पर्यटन उद्योग, मनोरंजन उद्योग, सौन्दर्य उद्योग व सेवा क्षेत्र का विकास किया है। फलतः इन क्षेत्रों में कार्यरत महिला श्रमिकों की देह सौन्दर्य व कमनीयता का दोहन होने लगा है तथा स्त्री का एक बिकाऊ वस्तु के रूप में रूपांतरण हो रहा है जिससे स्त्री गरिमा का क्षरण हुआ है। वैश्वीकरण ने सेक्स टूरिज्म जैसी विकृतियों में तेजी ला दी है। समकालीन हिंदी कविता ने इसका अत्यंत सजग तरीके से चित्रण किया है। शिरीष कुमार मौर्य जी ने अपनी सद्यः प्रकाशित काव्य संकलन “खांटी कठिन कठोर अति” में इस मुद्दे को प्रभावशाली से उठाया है-

“ उन्हें नर्स बनाया जा रहा है
गोरी लडकियाँ एयर होस्टेस बन रही हैं बड़ी कम्पनियों में विचर रहीं हैं
साँवली लडकियाँ उदास हैं दुनियाँ की हवाई यात्राओं में उनका धरती पर
रहना
कितनी बड़ी बात है वे समझ नहीं पा रहीं”⁸

इसप्रकार समग्र रूप से विश्लेषण करने पर पता चलता है कि वैश्वीकरण पूंजीवाद का दूसरा चेहरा है जो लगातार शोषण के नित नये हथकंडे प्रयुक्त कर रहा है तथा उद्योगपतियों और नीतिनियंताओं का एक गठजोड़ तैयार हुआ है जिससे देश की नीतियाँ किसानों, मजदूरों व आम जन को लेकर नहीं अपितु पूंजीपतियों के हितों को ध्यान में रखकर निर्मित किया जा रहा है। समकालीन हिंदी कविता ने पूंजीवाद के मोह से वैश्वीकरण का मुखौटा उतर फेंका और उसके वास्तविक स्वरूप का ज्ञान वास्तविक ज्ञान सामान्य को कराया है। चन्द्रकान्त देवताले जी इसी संदर्भ में अपनी बात रखते हुए कहते हैं कि -

“देखो दो मुहें शब्दों को
ध्यान से देखो
सुनों उनकी पीठ पीछे की फुसफुसाहट
मंच के तमाम तामझाम के बाद की वह
नेपथ्य की भूमिगत साजिश /”⁹

पूंजीवादी चालों के विरुद्ध आज भी समकालीन हिंदी कविता आम आदमी के दुःखों व उनकी करुणाजनक स्थिति को संबल प्रदान कर उनके हक में अपनी आवाज़ बुलंद किये हुए है। इसप्रकार से समकालीन हिंदी कविता अपने कर्तव्य पथ पर अविचलित रूप से अग्रसर है।

संदर्भ

1. नव उदारवाद का फासीवादी चेहरा-फ़िदेल कास्त्रो, अनुवादक-राम किशन गुप्त, पृष्ठ संख्या-51
2. http://kavitakosh.org/kk/index.php?title=मेरी_कथा/लीलाधर_जगूड़ी
3. दो लाख किसानों के लिए एक कविता, स्याह हाशिए-मृत्युंजय, पृष्ठ संख्या-18
4. शैतान, महेश चन्द्र पुनेठा, www.kavitakosh.com
5. विमर्श और आलोचना-प्रणव कृष्ण, पृष्ठ संख्या-162
6. मरचिरैया, तो काहे का मै -केशव तिवारी, पृष्ठ संख्या-24
7. डीठवन एकादशी, आसान नहीं विदा केशव तिवारी, पृष्ठ संख्या-
8. सांवल्लो की घर कथा, खांटी कठिन कठोर अति -शिरीष कुमार मौर्य, पृष्ठ संख्या-64
9. भाषा के भेदे नाटक में -चंद्रकांत देवताले ,